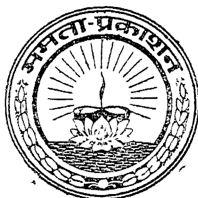
बौद्ध-संस्कार-पद्धति

लेखक—

भिक्षु धर्मरक्षित

त्रिपिटकाचार्य, एम० ए०

प्रकाशक—



कबीरचौरा, वाराणसी-१

(उत्तर प्रदेश)

मूल्य : ५० न० पै०

बुद्धाब्द २५०३

प्रकाशक—ममता प्रकाशन, कबीरचौरा, वाराणसी।
मुद्रक—याज्ञवल्क्य, ममता प्रेस, कबीरचौरा, वाराणसी।

आमुख

भारत के बौद्ध-उपासकों की माँग पर मैंने सन् १९५५ में 'बौद्धचर्या-विधि' नामक पुस्तक लिखी थी, जिसका सब ओर से स्वागत किया गया। यही कारण था कि उसके कई संस्करण हिन्दी और मराठी में प्रकाशित हो चुके हैं। इस बार मुझे दीक्षा देने आदि के कार्यों से चांदा, बालाघाट, दुर्ग, अलीगढ़, दिल्ली, आगरा आदि जिलों की यात्राएँ करनी पड़ीं। प्रायः सब स्थानों के उपासकों ने मांग की कि बौद्ध-संस्कारों की एक पुस्तक अलग से प्रकाशित होनी चाहिए, जिसमें विवाह और अन्त्येष्टि संस्कारों का विस्तृत विधान दिया गया हो, जिससे इन संस्कारों के सम्पादन में किसी प्रकार की कठिनाई न हो। मैंने राजनाँद-गांव के श्री हरिश्चन्द्र ऋषि वकील को वचन भी दे दिया कि संस्कार-सम्बन्धी पुस्तक को शीघ्र ही लिखने का प्रयत्न करूंगा। आप देखेंगे कि इस पुस्तक में अन्य सभी संस्कारों के साथ उक्त दोनो संस्कारो की विस्तृत विधि दे दी गई है, जिससे भारत के बौद्धों की संस्कार-सम्बन्धी कठिनाई दूर हो जायेगी—ऐसी आशा है।

सारनाथ, वाराणसी
८–७–१९५९

भिक्षु धर्मरक्षित

विषय सूची

—:—

अप्पमादेन सम्पादेथ

बौद्ध-संस्कार-पद्धति

व्यक्ति के जीवन में संस्कारों का बहुत महत्व है। संस्कारों से ही व्यक्ति सुसंस्कृत एवं सभ्य होता है। प्राचीन काल से लेकर मानव-समाज में संस्कारों में विश्वास चला आ रहा है। यही कारण है कि प्रत्येक देश एवं जाति में देश-काल के अनुसार संस्कार प्रचलित हैं। बौद्ध-समाज में भी संस्कारों का विधान है। आजकल सभी बौद्ध देशों में कुछ संस्कार प्रचलित हैं। भारत के बौद्धों में भी परम्परा से कुछ संस्कार चले आ रहे हैं। इन संस्कारों में १० मुख्य रूप से प्रचलित हैं— (१) गर्भमंगल, (२) नामकरण, (३) अन्नप्राशन, (४) केशकर्तन, (५) कर्णवेध, (६) विद्यारम्भ, (७) विवाह, (८) प्रव्रज्या, (९) उपसम्पदा और (१०) अन्त्येष्टि। इनमें से प्रव्रज्या और उपसम्पदा केवल भिक्षुओं के लिए हैं, शेष सबके लिए। यहाँ इन संस्कारों की विधि दी जा रही है—

१. गर्भमङ्गल

यह पहला संस्कार है, जो गर्भ-स्थिर होने के तीन मास के पश्चात् अपनी सुविधा के अनुसार किया जाता है। गर्भ-मङ्गल को पालि भाषा में 'गब्भमङ्गल' कहते हैं। इस संस्कार के दिन गर्भस्थित बालक या बालिका के कल्याण के लिए माता त्रिशरण-सहित पञ्चशील ग्रहण करती है। बुद्ध-पूजा करती तथा परित्राण-पाठ सुनती और भिक्षुओं को भोजन-दान दे उनसे आशीर्वाद लेती एवं उपदेश सुनती है, किन्तु जहाँ भिक्षु

उपलब्ध न हों, वहाँ इस संस्कार को इस प्रकार करना चाहिए। माता को चाहिए कि वह श्वेत एवं शुद्ध वस्त्र पहन कर सर्वप्रथम पुष्प, धूप, दीप से बुद्धमूर्ति की पूजा करे। यह पूजा घर में या किसी बुद्ध-मन्दिर में की जा सकती है। यदि बुद्ध-मन्दिर न हो तो घर में ही सुविधाजनक स्थान में एक बुद्धमूर्ति रखकर उसकी पूजा करनी चाहिए। पूजा के पश्चात् त्रिशरण-सहित पंचशील का दोनों हाथ जोड़कर स्वयं संकल्प करना चाहिए:—

नमस्कार

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।

(इसे तीन बार कहना चाहिए)

त्रिशरण

बुद्धं सरणं गच्छामि।
धम्मं सरणं गच्छामि।
संघं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
दुतियम्पि संघं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि बुद्धं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि धम्मं सरणं गच्छामि।
ततियम्पि संघं सरणं गच्छामि।

पंचशील

१—पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
२—अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

३—कामेसु मिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
४—मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।
५—सुरा-मेरय-मज्ज-पमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।

तदुपरान्त दोनों हाथ जोड़े हुए ही इस प्रकार त्रिरत्न-वन्दना करनी चाहिए:—

बुद्ध-वन्दना

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स।

(इसे तीन बार बोलना चाहिए। तदुपरान्त इसे कहना चाहिए—)

इतिपि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथी सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवाति।

धर्म-वन्दना

स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूहीति।

संघ-वन्दना

सुपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, उजुपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, ञायपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, सामीचिपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठपुरिसपुग्गला एस भगवतो सावकसंघो, आहुनेय्यो, पाहुनेय्यो, दक्खिनेय्यो, अञ्जलिकरणीयो, अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्साति।

संकल्प

इमाय धम्मानुधम्मपटिपत्तिया बुद्धं पूजेमि।

इमाय धम्मानुधम्म-पटिपत्तिया धम्मं पूजेमि ।
इमाय धम्मानुधम्म पटिपत्तिया संघं पूजेमि ।
अद्धा इमाय पटिपत्तिया जातिजरामरणम्हा परिमुञ्चिस्सामि ।
इमिना पुञ्ञकम्मेन मा मे बालसमागमो ।
सतं समागमो होतु याव निब्बान पत्तिया ॥

इस प्रकार त्रिरत्न-वन्दना एवं संकल्प के पश्चात् बुद्धमूर्ति को तीन बार अभिवादन करना चाहिए और अपने परिवार तथा इष्टमित्रों के साथ प्रसन्नतापूर्वक भोजन करना चाहिए। यदि भोजन-प्रबन्ध न कर सकें, तो मिष्टान्न वितरण करके भी इस संस्कार की विधि सम्पन्न की जा सकती है।

२. नामकरण

यह दूसरा संस्कार है, जो बालक या बालिका के जन्म होने के पश्चात् पाँचवें सप्ताह में किया जाता है। उस दिन माता स्नान करके त्रिशरण-सहित पंचशील ग्रहण करती है और बच्चे को गोद में लेकर शान्तिपूर्वक बैठकर भिक्षुओं से परित्राण-पाठ सुनती है। जहाँ भिक्षु न उपलब्ध हों वहाँ गर्भमंगल में बतलाई हुई विधि से त्रिशरण-पंचशील का संकल्प कर त्रिरत्न-वन्दना के पश्चात् बच्चे का नाम रखना चाहिए। नाम ऐसा होना चाहिए जो प्रज्ञा, प्रतिभा, ओज, वीर्य, करुणा, मैत्री, उदारता आदि गुणों का द्योतक हो। नाम के साथ जातिवाचक शब्द नहीं होने चाहिए और न तो वर्गविशेष के द्योतक ही। निकृष्ट नाम भी नहीं रखने चाहिए। जैसे कि कतवारू, घुरहू, घसीटू, पनारू, घिनहू या फेंकनी, दुखिया, काली आदि। नाम रखे जाने के उपरान्त, सत्कारपूर्वक भिक्षु को विदा कर अपने परिवार तथा इष्टमित्रों सहित प्रीतिभोज करना तथा आमोद-प्रमोद मांगलिक संस्कार का आनन्द मनाना चाहिए। पुस्तक के अन्त में बौद्ध बालक-बालिकाओं के कुछ नाम दिए गए हैं, उनसे नामकरण में सहायता मिलेगी।

३. अन्नप्राशन

यह तीसरा संस्कार है, जो जन्म के पाँचवें मास में सुविधा के अनुसार किया जाता है। पालि में इसे 'अन्नपासन' कहते हैं। इस संस्कार के दिन माता बच्चे के साथ नवीन वस्त्र पहन कर त्रिशरण-सहित पंचशील ग्रहण कर परित्राण-पाठ सुनती है। यदि परित्राण-पाठ करने के लिए भिक्षु न हों तो त्रिशरण-पंचशील के ग्रहण करने के पश्चात् त्रिरत्न-वन्दना कर एक कटोरी में खीर लेकर चम्मच से "नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स" कहते हुए बच्चे को चटाती है। यदि भिक्षु हों तो प्रधान भिक्षु खीर को बच्चे को चटाता है। उसी दिन बच्चे को बुद्धमूर्ति का दर्शन कराते एवं बुद्ध-पूजा करते हैं।

४. केशकर्तन

यह चौथा संस्कार है, जो बच्चे के जन्म के तीन वर्ष के भीतर अपनी सुविधा के अनुसार किया जाता है। पालि में इसे 'केसकप्पन' कहते हैं। यह संस्कार किसी बौद्ध विहार, पूजनीय स्थान अथवा घर में भी होता है। पहले भिक्षु या कोई बौद्धाचार्य्य (=विद्वान् गृहस्थ) छुरे से बच्चे के दो-चार बाल काटता है, तदुपरान्त बाल बनाने वाला व्यक्ति सावधानी से बच्चे के सिर का मुंडन करता है। बालों को आटे की लोई में रखकर उसी लोई से बच्चे का सिर पोंछ लिया जाता है। फिर उस लोई को किसी मैदान में गाड़ दिया जाता है अथवा किसी नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है। मुण्डन हो जाने पर बच्चे को स्नान करा नवीन वस्त्र पहनाते हैं और माता या पिता उसे गोद में लेकर त्रिशरण-पञ्चशील ग्रहण करते, परित्राण-पाठ सुनते और कुछ दान करते हैं। सायंकाल बुद्ध-मन्दिर में जाकर पुष्प-धूप-दीप के साथ बुद्ध-पूजा करते हैं।

५. कर्णवेध

यह पाँचवाँ संस्कार बच्चे के कान छेदे जाने का है। यह जन्म के

पाँचवें वर्ष में होता है। पालि में इसे 'कण्णविज्झन' कहते हैं। कभी-कभी केशकर्तन तथा कर्णवेध एक साथ भी किए जाते हैं। इस संस्कार के दिन भी त्रिशरण-पञ्चशील लिया और परित्राण-पाठ सुना जाता है। तदुपरान्त बच्चे का कान किसी चतुर व्यक्ति से छेदवा कर बाली आदि पहना दिये जाते हैं।

६. विद्यारम्भ

यह छठाँ संस्कार है, जो जन्म के पाँचवें या सातवें वर्ष में होता है। उस दिन बच्चे को मन्दिर में ले जाकर बुद्ध-पूजा कराते हैं, फिर त्रिशरण-पञ्चशील ग्रहण करते हैं। तदुपरान्त भिक्षु या बौद्धाचार्य पट्टी या स्लेट पर बच्चे के हाथ में खरिया की पत्ती पकड़ा कर अपने हाथ के सहारे उससे 'बुद्धं सरणं गच्छामि, धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि' लिखवाते हैं। इसे विद्यारम्भ (=विज्जारम्भ) संस्कार कहते हैं। तदुपरान्त बालक सुविधानुसार किसी विद्यालय में जाकर विद्याध्ययन कर सकता है।

७. विवाह

यह सातवाँ महत्त्वपूर्ण संस्कार है। गृहस्थ-जीवन की आधार-शिला इसे ही मानते हैं। विवाह संस्कार की विधि भारत में प्रचलित प्राचीन परम्परा के ही अनुसार यहाँ दी जा रही है:—

बौद्धों के लिए किसी भी शुभकार्य के निमित्त अपनी सुविधा के अनुसार प्रत्येक क्षण शुभ होता है। अतः विवाह के लिए वर और कन्या दोनों पक्षों के लोग अपनी परिस्थिति एवं सुविधा के अनुसार विवाह की तिथि और स्थान निश्चित करते हैं। यदि विवाह-कार्य को सफल कराने के लिए किसी भिक्षु या बौद्धाचार्य (=योग्य बौद्ध-गृहस्थ) को विशेष रूप से बुलाना हो तो उनसे भी राय ले लेते हैं। बौद्ध त्रिशरण के अतिरिक्त अन्य किसी की शरण नहीं जाते, अतः विवाह से

सम्बन्धित बौद्धधर्म के विपरीत किसी भी रीति-रिवाज अथवा पूजा-पाठ को नहीं करते। केवल विवाह के दिन वर और वधू को अपने-अपने घर पर सुगन्धित उबटन, तेल और हल्दी लगाकर स्नान करवाते हैं। स्नान के उपरान्त वे अपने सामर्थ्य के अनुसार वस्त्राभूषण आदि धारण करते हैं। किसी विशेष वस्त्र अथवा आभूषण की आवश्यकता नहीं होती। वस्त्राभूषण धारण करने के पश्चात् धूप, दीप, पुष्प आदि से बुद्ध-पूजा करते तथा त्रिशरण-पंचशील ग्रहण करते हैं।

वर एवं वधू दोनों पक्ष के लोग पूर्व निश्चय के अनुसार वैवाहिक कार्य सम्पन्न करने के लिए नियत स्थान पर उपस्थित होते हैं। गाजे-बाजे आदि खुशी के सामान अपने सामर्थ्य के अनुसार ही हों, किन्तु इनके बिना विवाह-कार्य में कोई रुकावट नहीं होती। विवाह के लिए एक सुन्दर सजा हुआ मण्डप होना चाहिए। एक ओर भगवान् बुद्ध की मूर्ति या चित्र भली प्रकार सम्मानपूर्वक रखना चाहिए। उसके सामने वर-वधू को बैठाना चाहिए। वधू को वर की बायें ओर ही बैठाना चाहिए। मण्डप में दोनों पक्षों के लोगों को उपस्थित रहना चाहिए। मण्डप में एक मिट्टी अथवा किसी धातु का जल से भरा हुआ कलश रखना चाहिए। कलश पर पाँच प्रकार के वृक्षों के पल्लव (=पत्तियाँ) सजाकर रखने चाहिए। इन पल्लवों में बोधिवृक्ष (=पीपल) की पत्ती का होना आवश्यक है। हाथ से बटे हुए तीन तागों के कच्चे सूत को मंडप के चारों ओर, जहाँ तक लोग बैठे हों, घेरकर उसके सिरे को कलश की गर्दन में लपेटते हुए इतना सिरा छोड़ दें, जो वर-वधू एवं भिक्षु तथा बौद्धाचार्य और प्रमुख लोगों के हाथों में रह सके।

बुद्ध-मूर्ति तथा कलश के पास ही भिक्षु या बौद्धाचार्य के लिए भी बैठने का आसन लगा होना चाहिए। जब वर-वधू मण्डप में आ जायँ, तब विवाह कराने वाले भिक्षु या बौद्धाचार्य को बुलाना चाहिए। उनके आने पर सर्वप्रथम वर और वधू उनसे त्रिशरणसहित पञ्चशील ग्रहण

करते हैं (गर्भमंगल संस्कार में त्रिशरण-पंचशील ग्रहण करने की विधि देखें, किन्तु यहाँ भिक्षु या बौद्धाचार्य से ही ग्रहण करने का विधान है)। तदुपरान्त भिक्षु या बौद्धाचार्य वर से इन पाँच प्रतिज्ञाओं को कराता है। वह इस प्रकार कहता है:—

पति द्वारा की जाने वाली प्रतिज्ञा

प्रिय उपासक! आप सावधान होकर ये प्रतिज्ञाएँ करें। भगवान् बुद्ध ने पति द्वारा पत्नी के लिए ये पाँच कर्तव्य बतलाए हैं, जिनका आपको आज से जीवन-पर्यन्त पालन करना होगा—

(भिक्षु या बौद्धाचार्य एक-एक शब्द को बोलता है और वर उसे दोहराता जाता है।)

१—सम्माननाय

मैं अपनी पत्नी का सम्मान करूँगा।

२—अनवमाननाय

मैं अपनी पत्नी का अपमान नहीं करूँगा।

३—अनतिचरियाय

मैं मिथ्याचार नहीं करूँगा।

४—इस्सरिय-वोस्सग्गेन

मैं धन-दौलत से अपनी पत्नी को सन्तुष्ट रखूँगा।

५—अलंकारा-नुप्पदानेन

मैं अपनी पत्नी को आभूषण आदि देकर प्रसन्न रखूँगा।

(इसके पश्चात् भिक्षु या बौद्धाचार्य वधू से इन पांच प्रतिज्ञाओं को कराता है, जिन्हें वर की ही भाँति वधू भी दोहराती जाती है—)

पत्नी द्वारा की जाने वाली प्रतिज्ञा

सौभाग्यवती उपासिके! आप सावधान होकर ये प्रतिज्ञाएँ करें।

भगवान् बुद्ध ने पत्नी द्वारा पति के लिए ये पाँच कर्तव्य बतलाए हैं, जिनका आपको आज से जीवन-पर्यन्त पालन करना होगा:—

१—सुसंविहित कम्मन्ता

मैं अपने घर के सब कामों को भली प्रकार करूँगी।

२—संगहित परिजना

मैं अपने परिवार, परिजन और नौकर-चाकरों को प्रसन्न तथा वश में रखूंगी।

३—अनतिचरियाय

मैं मिथ्याचार नहीं करूँगी।

४—सम्भतस्स अनुरक्खनं

मैं अपने पति के उपार्जित धन-दौलत की रक्षा करूँगी।

५—दक्खा च अनलसा च सब्बकिच्चेसु

मैं अपने घर के सभी कार्यों में दक्ष तथा आलस-रहित होऊंगी।

इन प्रतिज्ञाओं के समाप्त होने पर भिक्षु या बौद्धाचार्य महामंगल-सुत्त, करणीयमेत्तसुत्त तथा महामंगलगाथा का पाठ इस प्रकार करता है:—
[वर-वधू बैठे हुए ही दोनों हाथ जोड़कर सुनते हैं। उस समय वे मंगल सूत्र को, जो कि कलश में बँधा रहता है, पकड़ लेते हैं। उस सूत्र को भिक्षु भी पकड़े रहता है तथा अन्य प्रमुख लोग भी।]

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

(इसे तीन बार कहना चाहिए।)

महामङ्गल सुत्त

एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं

ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि, उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं गाथाय अज्झभासि:—

बहू देवा मनुस्सा च मङ्गलानि अचिन्तयुं।
आकङ्खमाना सोत्थानं ब्रूहि मङ्गलमुत्तमं ॥१॥
असेवना च बालानं पण्डितानञ्च सेवना।
पूजा च पूजनीयानं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥२॥
पतिरूपदेसवासो च पुब्बे च कतपुञ्ञता।
अत्तसम्मापणिधि च एतं मङ्गलमुत्तमं ॥३॥
बाहुसच्चं च सिप्पञ्च विनयो च सुसिक्खितो।
सुभासिता च या वाचा एतं मङ्गलमुत्तमं ॥४॥
माता-पितु उपट्ठानं पुत्तदारस्स सङ्गहो।
अनाकुला च कम्मन्ता एतं मङ्गलमुत्तमं ॥५॥
दानञ्च धम्मचरिया च ञातकानं च सङ्गहो।
अनवज्जानि कम्मानि एतं मङ्गलमुत्तमं ॥६॥
आरति विरति पापा मज्जपाना च सञ्ञमो।
अप्पमादो च धम्मेसु एतं मङ्गलमुत्तमं ॥७॥
गारवो च निवातो च सन्तुट्ठी च कतञ्ञुता।
कालेन धम्मसवणं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥८॥
खन्ती च सोवचस्सता समणानञ्च दस्सनं।
कालेन धम्मसाकच्छा एतं मङ्गलमुत्तमं ॥९॥
तपो च ब्रह्मचरियञ्च अरियसच्चान दस्सनं।
निब्बानसच्छिकिरिया च एतं मङ्गलमुत्तमं ॥१०॥
फुट्ठस्स लोकधम्मेहि चित्तं यस्स न कम्पति।
असोकं विरजं खेमं एतं मङ्गलमुत्तमं ॥११॥

एतादिसानि कत्वान सब्बत्थमपराजिता ।
सब्बत्थ सोत्थिं गच्छन्ति तं तेसं मङ्गलमुत्तम'न्ति ॥१२॥

करणीयमेत्त सुत्त

करणीयमत्थकुसलेन,
यन्तं सन्तं पदं अभिसमेच्च ।
सक्को उजू च सूजू च,
सुवचो चस्स मुदु अनतिमानी ॥१॥

सन्तुस्सको च सुभरो च,
अप्पकिच्चो च सल्लहुकवुत्ति ।
सन्तिन्द्रियो च निपको च,
अप्पगब्भो कुलेसु अननुगिद्धो ॥२॥

न च खुद्दं समाचरे किञ्चि,
येन विञ्ञू परे उपवदेय्युं ।
सुखिनो वा खेमिनो होन्तु,
सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता ॥३॥

ये केचि पाणभूतत्थि तसा वा,
थावरा वा अनवसेसा ।
दीघा वा ये महन्ता वा,
मज्झिमा रस्सका अणुकथूला ॥४॥

दिट्ठा वा ये वा अदिट्ठा,
ये च दूरे वसन्ति अविदूरे ।
भूता वा सम्भवेसी वा,
सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता ॥ ५ ॥

न परो परं निकुब्बेथ,
नातिमञ्ञेथ कत्थचि न किञ्चि ।
ब्यारोसना पटिघसञ्ञा,
नाञ्ञमञ्ञस्स दुक्खमिच्छेय्य ॥६॥

माता यथा नियं पुत्तं,
आयुसा एकपुत्त-मनुरक्खे ।
एवम्पि सब्ब-भूतेसु,
मानसं भावये अपरिमाणं ॥७॥

मेत्तञ्च सब्ब-लोकस्मिं,
मानसं भावये अपरिमाणं ।
उद्धं अधो च तिरियञ्च,
असम्बाधं अवेरं असपत्तं ॥ ८ ॥

तिट्ठं चरं निसिन्नो वा,
सयानो वा यावतस्स विगतमिद्धो ।
एतं सतिं अधिट्ठेय्य,
ब्रह्ममेतं विहारं इधमाहु ॥९॥

दिट्ठिञ्च अनुपगम्म,
सीलवा दस्सनेन सम्पन्नो ।
कामेसु विनेय्य गेधं,
न हि जातु गब्भसेय्यं पुनरेतीति ॥१०॥

महामङ्गल गाथा

महाकारुणिको नाथो हिताय सब्बपाणिनं,
पूरेत्वा पारमी सब्बा पत्तो सम्बोधि-मुत्तमं ।
एतेन सच्चवज्जेन होतु ते जयमङ्गलं ॥१॥

जयन्तो बोधिया मूले सक्यानं नन्दिवड्ढनो।
एवं तुय्हं जयो होतु जयस्सु जयमङ्गलं ॥२॥
सक्कत्वा बुद्धरतनं ओसधं उत्तमं वरं,
हितं देवमनुस्सानं बुद्धतेजेन सोत्थिना।
नस्सन्तुपद्दवा सब्बे दुक्खा वूपसमेन्तु ते ॥३॥

सक्कत्वा धम्मरतनं ओसधं उत्तमं वरं,
परिलाहूपसमनं धम्मतेजेन सोत्थिना।
नस्सन्तुपद्दवा सब्बे भया वूपसमेन्तु ते ॥४॥

सक्कत्वा संघरतनं ओसधं उत्तमं वरं,
आहुणेय्यं पाहुणेय्यं संघतेजेन सोत्थिना।
नस्सन्तुपद्दवा सब्बे रोगा वूपसमेन्तु ते ॥५॥
यं किञ्चि रतनं लोके विज्जति विविधं पुथु,
रतनं बुद्धसमं नत्थि तस्मा सोत्थि भवन्तु ते ॥६॥
यं किञ्चि रतनं लोके विज्जति विविधं पुथु,
रतनं धम्मसमं नत्थि तस्मा सोत्थि भवन्तु ते ॥७॥

यं किञ्चि रतनं लोके विज्जति विविधं पुथु,
रतनं संघसमं नत्थि तस्मा सोत्थि भवन्तु ते ॥८॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञं बुद्धो मे सरणं वरं,
एतेन सच्चवज्जेन होतु ते जयमङ्गलं ॥९॥

नत्थि मे सरणं अञ्ञं धम्मो मे सरणं वरं,
एतेन सच्चवज्जेन होतु ते जयमङ्गलं ॥१०॥
नत्थि मे सरणं अञ्ञं संघो मे सरणं वरं,
एतेन सच्चवज्जेन होतु ते जयमङ्गलं ॥११॥

सब्बीतियो विवज्जन्तु सब्बरोगो विनस्सतु,
मा ते भवत्वन्तरायो सुखी दीघायुको भव ॥१२॥

भवतु सब्बमङ्गलं रक्खन्तु सब्बदेवता,
सब्बबुद्धानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥१३॥
भवतु सब्बमङ्गलं रक्खन्तु सब्बदेवता,
सब्बधम्मानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥१४॥
भवतु सब्बमङ्गलं रक्खन्तु सब्बदेवता,
सब्बसंघानुभावेन सदा सोत्थि भवन्तु ते ॥१५॥
नक्खत्तयक्खभूतानं पापग्गहनिवारणा,
परित्तस्सानुभावेन हन्तु सब्बे उपद्दवे ॥१६॥
यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च,
यो चामनापो सकुणस्स सद्दो ।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अकन्तं,
बुद्धानुभावेन विनासमेन्तु ॥१७॥
यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च,
यो चामनापो सकुणस्स सद्दो ।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अकन्तं,
धम्मानुभावेन विनासमेन्तु ॥१८॥
यं दुन्निमित्तं अवमङ्गलञ्च,
यो चामनापो सकुणस्स सद्दो ।
पापग्गहो दुस्सुपिनं अकन्तं,
संघानुभावेन विनासमेन्तु ॥१९॥

सूत्र-पाठ के पश्चात् वर-वधू को वहीं खड़ा कराया जाता है। पहले से दो पुष्प-मालाएँ बनाकर रखी रहती हैं। उनमें से एक पुष्प-माला लेकर पहले वधू वर के गले में डालती है और माला पहनाकर नमस्कार करती है। फिर वर वधू के गले में माला डालता है और माला पहनाकर उसे तिलक लगाता है। (प्रदेश के रिवाज के अनुसार

अंगूठी भी पहनायी जाती है या सिर में सिन्दूर भी लगाया जाता है, किन्तु तिलक लगाने की प्रथा ही समुचित है।) इस समय घूँघट अथवा पर्दा नहीं रखा जाता है। बौद्धों में पर्दे का रिवाज सर्वथा ही नहीं है, इसका ध्यान रखना चाहिए।

तदुपरान्त बौद्धाचार्य वर और वधू दोनों के दायें हाथ को उनके संरक्षकों द्वारा मिलवाता है। वर वधू के हाथ को अपने हाथ से पकड़ लेता है। तब बौद्धाचार्य कलश से किसी गडुवा अथवा गिलास में जल लेकर उनके हाथों पर छोड़ते हुए तीन बार यह बोलता है—

सब्बे बुद्धा बलप्पत्ता पच्चेकानञ्च यं बलं।
अरहन्तानञ्च तेजेन रक्खं बन्धामि सब्बसो॥

तदुपरान्त कलश के गर्दन में लपेटे हुए मंगलसूत्र से कुछ भाग लेकर वर और वधू के दायें हाथों में क्रमशः बाँध देता है। और कलश के जल को पांच प्रकार के पल्लवों से लेकर तीन बार थोड़ा-थोड़ा वर-वधू पर छिड़क देता है और इस गाथा को एक बार बोलता है—

इच्छितं पत्थितं तुय्हं खिप्पमेव समिज्झतु।
सब्बे पूरेन्तु चित्तसंकप्पा चन्दो पन्नरसो यथा॥

फिर दोनों पक्षों के लोग वर-वधू पर पुष्प-वर्षा करते हैं अर्थात् उनपर पुष्प की पंखुड़ियों को फेंकते हैं। तदुपरान्त उपस्थित लोग अपने सामर्थ्य के अनुसार वर-वधू को अनुकूल उपहार देते है।

तत्पश्चात् वर-वधू मण्डप से निकलते हैं और इस प्रकार विवाह-संस्कार पूर्ण होता है। अन्त में भोजन, जलपान आदि उत्तम पदार्थों से आगन्तुकों का स्वागत करते हैं। भिक्षु या बौद्धाचार्य को भी सम्मान-पूर्वक विदा करते है।

८. प्रव्रज्या

बौद्धधर्म में प्रचलित रीति के अनुसार जीवन में एक बार सबको

प्रव्रजित होना चाहिए। प्रव्रजित हुए व्यक्ति को श्रामणेर (=सामणेर) कहते हैं। श्रामणेर को दस शीलों का पालन करना होता है। श्रामणेर-दीक्षा तीन दिन, पाँच दिन, सात दिन, पन्द्रह दिन से लेकर एक-दो वर्ष तक की भी होती है। इस दीक्षा को ग्रहण कर विहार में भिक्षुओं के साथ रहकर ध्यान-भावना एवं मनन-अध्ययन में समय बिताया जाता है। यह दीक्षा किसी भिक्षु से ही ग्रहण की जा सकती है। इस दीक्षा को कोई गृहस्थ नहीं दे सकता। इसे जीवन में जब कभी भी सुविधानुसार ग्रहण किया जा सकता है। इसकी विधि भिक्षुओं को ज्ञात होती है। विनय-पिटक में इसका पूरा वर्णन है। अतः हम उसे यहाँ नहीं दे रहे हैं।

९. उपसम्पदा

यह दीक्षा उन श्रामणेरों अथवा व्यक्तियों को दी जाती है जो जीवन-पर्यन्त भिक्षु रहना चाहते हैं, किन्तु यदि उपसम्पन्न भिक्षु भी जब चाहे तब गृहस्थ हो सकता है। बर्मा आदि बौद्ध देशों में ऐसा ही नियम है। एक सप्ताह, दो सप्ताह के लिए भी उपसम्पदा ली जाती है। उपसम्पन्न भिक्षु के लिए २२७ नियम हैं, जिनका पालन उन्हें करना होता है। यह दीक्षा मध्यदेश (=उत्तर प्रदेश और विहार) में १० भिक्षुओं द्वारा सम्पन्न होती है तथा अन्य प्रदेशों में ५ भिक्षुओं द्वारा। इस दीक्षा के लिए २० वर्ष की आयु का होना अनिवार्य है और माता-पिता से आज्ञा प्राप्त करना भी। इस दीक्षा की विधि विनय-पिटक में विस्तारपूर्वक दी हुई है।

१०. अन्त्येष्टि

यह अन्तिम संस्कार है। इसे ही 'दाहकम्म तथा मतकभत्त' भी कहते हैं। 'दाहकम्म' का अर्थ है मृतक का अग्निसंस्कार करना और 'मतकभत्त' का अर्थ है मृतक के पुण्यार्थ भोजन-दान आदि देना।

जब कोई व्यक्ति मरने के सन्निकट होता है तो उसे, महामंगलसुत्त, करणीयमेत्तसुत्त आदि सूत्रों का परित्राण पाठ करते हैं। उस समय यदि भिक्षु हों तो उत्तम, नहीं तो कोई भी आदमी सूत्रों का पाठ कर सकता है। यदि वह परित्राण पाठ सुनते-सुनते मर जाय तो बड़ा शुभ मानते हैं। मरने से पूर्व बौद्ध देशों में उस व्यक्ति के हाथ से स्पर्श कराकर चीवर आदि भी भिक्षुओ को दान देते हैं।

मरने के समय व्यक्ति को चारपाई आदि से भूमि पर कदापि नहीं उतारना चाहिए। जब मर जाय, तब चारपाई आदि से उतार कर उसे एक चटाई पर लेटा देना चाहिए और शुद्ध जल से उसे स्नान करा चन्दन, गुलाब-जल आदि उसके शरीर पर यत्र-तत्र छिड़क कर श्वेत वस्त्र का कफन देना चाहिए। हां, उसके शरीर में जो आभूषण हों उन्हें निकाल देना चाहिए। एक अर्थी बनानी चाहिए और उस अर्थी पर उसे रखना चाहिए। चूंकि महापरिनिर्वाण के समय भगवान् बुद्ध ने उत्तर ओर सिरहाना किया था, इसलिए मृतक का सिरहाना भी उत्तर ओर ही करते हैं। अर्थी पर मृतक को रखकर उस पर पुष्पादि डाल देना चाहिए और घर-परिवार, सम्बन्धी तथा पड़ोसी लोगों के द्वारा अर्थी उठा कर श्मशान ले जानी चाहिए। अर्थी के साथ स्त्रियों का जाना निषिद्ध है। केवल पुरुषों को ही अर्थी के साथ जाना चाहिए। श्मशान जाते समय अपने साथ भिक्षुओं को भी ले जाना चाहिए। यदि भिक्षु न मिलें तो आगे की सारी क्रिया बौद्धाचार्य अर्थात् कोई भी योग्य बौद्धगृहस्थ करा सकता है। श्मशान जाते समय अर्थी के साथ जितने मनुष्य होते हैं, वे सब बड़े सावधान और गम्भीरता के साथ चलते हैं। सब शान्त होते हैं। उस समय अर्थी के साथ बाजा भी ले जाया जा सकता है किन्तु केवल ऐसा बाजा जिससे भी शोक ही प्रगट हो, खुशी के भाव न प्रगट हों। लंका में एक प्रकार का नगाड़ा होता है, उसे ही बजाते हैं

जिसका स्वर बिल्कुल शोक प्रगट करने वाला होता है। यदि ऐसा बाजा न हो तो बाजे का प्रयोजन नहीं।

श्मशान में जाकर लकड़ी की चिता बनानी चाहिए। चिता में बीच का कुछ भाग खाली रखकर दोनों ओर छः खूँटे गाड़ कर बीच की खाली जगह को लकड़ी से भर देनी चाहिए और कुछ लकड़ी शेष रखनी चाहिए। चिता तैयार हो जाने पर अर्थी के पास सबको एकत्र होना चाहिए। अभी मृत-शरीर चिता पर नहीं रखना चाहिए, जब तक कि आगे की विधि सम्पन्न न हो जाय। अर्थी के पास सबके एकत्र हो जाने पर सभी लोग भिक्षु से त्रिशरण-सहित पंचशील ग्रहण करते हैं। यदि भिक्षु न हों तो सब लोग एक साथ ही त्रिशरण-पंचशील का उच्चारण करते हैं। तदुपरान्त मृतक के घर का दायक (उपासक) एक नया श्वेत-वस्त्र जो कम से कम पांच गज होता है, भिक्षु को दान करता है। उस वस्त्र को 'मतकवत्थ' (= मृतक वस्त्र) कहते हैं। भिक्षु के अभाव में 'मतकवत्थ' बौद्धाचार्य लेता है, किन्तु उसे वह पीछे भिक्षु-संघ को समर्पित कर देता है। बौद्धाचार्य 'मतकवत्थ' अपने उपयोग में नहीं ला सकता है, उसे भिक्षु ही अपने चीवर आदि बनाने के उपयोग में ला सकते हैं। 'मतकवत्थ' देते समय दायक इस प्रकार कहता है—

कालकतानं अम्हाकं ञातीनं पुञ्ञत्थाय इमं मतकवत्थं भिक्खुसंघस्स देम।

(इसे भिक्षु बोलता जाता है और दायक दोहराता जाता है। यदि एक भिक्षु होता है तो 'भिक्खुसंघस्स' के स्थान पर 'भिक्खुस्स' कहते हैं। संघ चार या चार से अधिक भिक्षुओं के होने पर ही होता है।)

तदुपरान्त भिक्षु इस गाथा का तीन बार पाठ करता है:—

अनिच्चा वत संखारा उप्पादवयधम्मिनो।
उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति तेसं वूपसमो सुखो॥

तत्पश्चात् भिक्षु अनित्यता के सम्बन्ध में संक्षेप में उपदेश देता है और बतलाता है कि सभी व्यक्ति इसी प्रकार संसार में जन्म लेते और मरते हैं। हम सबको जन्म, जरा, व्याधि से रहित निर्वाण-प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए।

तब मृतक के घर का कोई व्यक्ति (दायक) एक गिलास में जल लेकर एक थाली में धीरे-धीरे गिराता है। सभी सम्बन्धी या परिवार के लोग गिलास से अपना हाथ लगाए रहते हैं और इस प्रकार तीन बार कहते हैं।

इदं नो ञातीनं होतु, सुखिता होन्तु ञातयो।

तदुपरान्त भिक्षु इन गाथाओं का पाठ करता है:—

उन्नमे उदकं वट्टं यथा निन्नं पवत्तति।
एवमेव इतो दिन्नं पेतानं उपकप्पति॥ १ ॥
यथा वारिवहा पूरा परिपूरेन्ति सागरं।
एवमेव इतो दिन्नं पेतानं उपकप्पति॥ २ ॥
इच्छितं पत्थितं तुम्हं खिप्पमेव समिज्झतु।
सब्बे पूरेन्तु चित्तसंकप्पा चन्दो पन्नरसो यथा॥३॥
आयुरारोग्य सम्पत्ति, सग्गसम्पत्तिमेव च।
ततो निब्बानसम्पत्ति, इमिना ते समिज्झतु॥४॥

तत्पश्चात् मृतक को अर्थी पर से उतारकर चिता पर रखना चाहिए। कफन के साथ ही। शेष लकड़ियों को मृतक के ऊपर भली प्रकार रख देना चाहिए, और चिता को भली प्रकार जलने के लिए स्थान-स्थान पर घी डालना चाहिए। फिर मृतक का अपना खास सगा सम्बन्धी पति, पुत्र, भाई आदि तीन बार चिता की प्रदक्षिणा करे। प्रदक्षिणा सिर की ओर से शुरू करे और ख्याल रखे कि चिता उसके दायें रहे। तीन बार प्रदक्षिणा समाप्त होने पर सिर की ओर से ही कपूर, अगर, चन्दनादि कुछ सुगन्धित वस्तुओं के साथ चिता में आग

लगानी चाहिए। चिता में आग लगाने वाला व्यक्ति चाहे जैसा भी वस्त्र पहन सकता है, किन्तु वस्त्र सादा एवं श्वेत होना चाहिए। इस अवसर के लिए विशेष रूप से किसी श्वेत वस्त्र को मँगा कर पहनने की जरूरत नहीं है। जो वस्त्र पहले से पहनते हों उसे ही पहन सकते हैं।

चिता में आग लग जाने पर भिक्षु लौट आ सकते हैं, किन्तु सम्बन्धियों को उस समय तक वहां रहना चाहिए, जब तक कि मृतक जल न जाय। श्मशान से लौटकर सबको स्नान करना चाहिए और अपने पहने हुए कपड़ों को धो लेना चाहिए।

जिस घर में मृत्यु हुई हो उसे लीप-पोत कर शुद्ध कर लेना चाहिए और उसमें धूप आदि सुगन्धित पदार्थ जला कर चारों ओर धुमा देना चाहिए।

तीसरे दिन दायक को अपने एक-दो सम्बन्धियों के साथ श्मशान जाना चाहिए और एक घड़े से पानी लाकर चिता की राख पर डाल कर उसे शान्त करना चाहिए। चिता शान्त हो जाने पर यदि अस्थि पर स्तूप बनाने का विचार हो तो कुछ अस्थि चुन लेनी चाहिए और शेष अस्थि को राख के साथ ही नदी में प्रवाहित कर देनी चाहिए। या वहीं भूमि में गाड़ देनी चाहिए।

जिनमें शव-दाह करने का सामर्थ्य नहीं है, वे शव को भूमि में गाड़ भी सकते हैं, किन्तु उनके लिए भी विधि ऊपर जैसी ही है।

मृत्यु के सातवें, दसवें या बारहवें दिन सुविधानुसार मृत व्यक्ति के पुण्य के लिए भिक्षुओं को 'मतकभत्त' देते हैं। इसके लिए एक या दो दिन पूर्व ही भिक्षुओं को निमंत्रित कर देते हैं। भिक्षुओं के अभाव में भिखारियों, परिवार के लोगों तथा विद्वान् गृहस्थों को भोजन कराते हैं। विधि यह है कि निश्चित दिन प्रातःकाल से ही भोजनादि तैयार करते हैं। भोजन में चावल, दाल, रोटी, तरकारी

जो भी चाहें, अच्छा होना चाहिए। कच्चे-पक्के का कोई प्रश्न ही नहीं है। ११ बजे दिन तक भोजन तैयार हो जाना चाहिए, क्योंकि १२ बजे दिन से पहले ही भिक्षु भोजन करते हैं, उसके बाद नहीं। इसका ध्यान रखना चाहिए। भिक्षुओं के आने पर सत्कार पूर्वक, उनके पैर धोकर बिछे सुन्दर आसन पर उन्हें पंक्ति में बैठाना चाहिए। बने भोजन के प्रत्येक सामान से थोड़ा-थोड़ा लेकर एक बर्तन में रख कर बुद्धमूर्ति को चढ़ाना चाहिए। उस समय यह गाथा एक बार कहनी चाहिए :—

अधिवासेतु नो भन्ते भोजनं परिकप्पितं।
अनुकम्पं उपादाय परिगण्हातु मुत्तमं॥

तदुपरान्त भिक्षुओं के सामने थालियों में परसा हुआ भोजन लाकर रखना चाहिए और उसे किसी शुद्ध, स्वच्छ वस्त्र से ढँक देना चाहिए। यदि चीवर, तौलिया, साबुन पेंसिल, कलम, कागज आदि भिक्षुओं को दान करना चाहें तो उन परिष्कारों को भी भोजन के पास ही रख कर ढँक देना चाहिए। परिवार के सब लोगों को आकर भिक्षुओं को प्रणाम कर त्रिशरण सहित पंचशील ग्रहण करना चाहिए। फिर दोनों हाथ जोड़ कर इस प्रकार कहना चाहिए:—

अम्हाकं कालकतस्स ञातिस्स उद्दिस्स इमं भिक्खं सपरिक्खारं भिक्खुसंघस्स देम।

(इसे एक भिक्षु कहता है और परिवार वाले दोहराते जाते हैं। यदि 'परिष्कार' न हो तो 'सपरिक्खारं' शब्द छोड़ दिया जाता है।)

तब एक गिलास में पानी लेकर किसी थाली या बर्तन में परिवार का प्रमुख व्यक्ति धीरे-धीरे गिराता है और इस प्रकार तीन बार बोलता है—

इदं नो ञातीनं होतु, सुखिता होन्तु ञातयो।

फिर भिक्षु इस प्रकार कहते हैं—

उन्नमे उदकं वट्टं यथा निन्नं पवत्तति।
एवमेव इतो दिन्नं पेतानं उपकप्पति॥
यथावारिवहा पूरा परिपूरेन्ति सागरं।
एवमेव इतो दिन्नं पेतानं उपकप्पति॥
इच्छितं पत्थितं तुय्हं खिप्पमेव समिज्झतु।
सब्बे पूरेन्तु चित्तसंकप्पा चन्दो पन्नरसो यथा॥
आयुरारोग्य सम्पत्ति, सग्गसम्पत्तिमेव च।
ततो निब्बान-सम्पत्ति, इमिना ते समिज्झतु॥

बर्तन में सब पानी को गिरा कर फेंक देते हैं और भिक्षुओं को परस-परस कर प्रेमपूवक भोजन कराते हैं। भोजनोपरान्त भिक्षुओं के हाथ-मुँह धो लेने पर उनके पास आकर बैठते हैं, तब प्रमुख भिक्खु उपदेश देकर दानानुमोदन करते है। आज का उपदेश अनित्यता, दान, शील और भावना से सम्बंधित होता है।

तत्पश्चात् परिवार के लोग हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोलते हैं—

(इन गाथाओं को कोई एक भिक्षु पहले क्रमशः बोलता जाता है और उसके बाद परिवार वाले बोलते हैं—)

एत्तावता च अम्हेहि, सम्भतं पुञ्ञसम्पदं।
सब्बे देवानुमोदन्तु, सब्बसम्पत्ति सिद्धिया॥
दानं ददन्तु सद्धाय सीलं रक्खन्तु सब्बदा।
भावनाभिरता होन्तु गच्छन्तु देवता गता॥
आकासट्ठा च भूमट्ठा, देवा नागा महिद्धिका।
पुञ्ञं तं अनुमोदित्वा, चिरं रक्खन्तु सासनं॥
पुञ्ञं तं अनुमोदित्वा, चिरं रक्खन्तु देसनं।
पुञ्ञं तं अनुमोदित्वा, चिरं रक्खन्तु मं परं॥
इमिना पुञ्ञकम्मेन, मा मे बालसमागमो।
सतं समागमो होतु, याव निब्बान पत्तिया॥

साधु ! साधु !! साधु !!!

इसके बाद परिवार के सब लोग भिक्षुओं को प्रणाम करते हैं और वे उन्हें इस प्रकार बोलकर आशीर्वाद देते हैं:—

अभिवादनसीलिस्स निच्चं बद्धापचायिनो ।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वण्णो सुखं बलं ॥

तब भिक्षु चले जाते हैं और इस प्रकार अन्त्येष्टि-क्रिया सब प्रकार से सम्पन्न हो जाती है। मृत व्यक्ति की तृप्ति एवं सत्कार के उद्देश्य से श्रद्धापूर्वक कुछ दान आदि सत्कर्म करना 'श्राद्ध' कहलाता है। 'मतकभत्त' भी उसे ही कहते हैं। यों तो जीवितावस्था में सर्वत्र ही एक दूसरे के प्रति प्रेम-व्यवहार प्रदर्शित करते हैं, परन्तु मरने के पश्चात् भी अपने पूज्य, स्वजन, सम्बन्धियों के स्मरण तथा सम्मानार्थ कुछ दान आदि पुण्यकर्म करना सभ्य और शिष्ट समाज का कर्तव्य होता है। यही कारण है कि मृतक-सत्कार एवं मतकभत्त प्रत्येक देश एवं समाज में किसी न किसी रूप में प्रचलित है।

—:※:—

बौद्ध नामों की तालिका

बालक-नाम

अंगिरा
अंगीरस
अग्निदत्त
अजयकुमार
अभयकुमार
अजित
अजितकुमार
अजितभद्र
अरिष्ट
अरुणकुमार
अरुणेन्द्र
अरुणशेखर
अतुलदेव
अनन्तकुमार
अनन्तदेव
अनाथपिण्डिक
अनिरुद्ध
अनुरुद्ध
अभयकीर्ति
अमररत्न
अमरदेव

अमरेन्द्र
अमरेन्द्रकुमार
अलेन्दुकुमार
अमृतानन्द
अशोककुमार
अश्वघोष
अश्वगुप्त
असंग
अच्युतकुमार
अच्युतगामी
अभयराज
अनुराध
अनोमदर्शी
आदित्यकुमार
आदित्यनाथ
आनन्दकुमार
आनन्दसेन
आर्यचन्द्र
आर्यतिलक
आर्यदेव
आर्यशूर

इन्दुशेखर
इन्द्रगुप्त
इन्द्रविजय
इन्द्रभद्र
इन्द्रादित्य
उग्रसेन
उदय
उदयभद्र
उदयादित्य
उदयचन्द्र
उत्तरकुमार
उपवाण
उदायी
उपतिष्य
उपनन्द
उपसेन
ऋषिदत्त
ऋषिकुमार
कमलशील
कमलदेव
कमलरत्न

कमलाकर
कात्यायन
कीर्तिध्वज
काश्यप
काश्यपकुमार
कीर्तिराज
कुमारगुप्त
कुमारजीव
कुमार काश्यप
कुलनन्द
कृतवर्धन
कीर्तिवर्धन
कृतराज
कौरव्य
क्षेमकुमार
क्षेमानन्द
गुणाकर
गुणसागर
गुणरत्न
गुणानन्द
गोदत्त

चक्रधर
चक्षुपाल
चन्द्रकीर्ति
चन्द्रगुप्त
चन्द्रराज
चन्द्रशेखर
चन्द्रदेव
चन्द्रभानु
चित्रसेन
चित्रगुप्त
चुन्द
चन्दन
जयकुमार
जगतानन्द
जयवर्धन
जयकृत
जयनाथ
जयन्त
जयानन्द
जयादित्य
जयरक्षित
जगन्मित्र
जयशेखर
जयसुमन
जयसेन
जयदेव

जयप्रकाश
जयन्तकुमार
जयादिव
जालीकुमार
जितेन्द्रकुमार
जिनगुप्त
जिनप्रभ
जिनभद्र
जिनमित्र
जिनयश
जिनेन्द्र
जीवक
जीवमित्र
ज्योतिकुमार
ज्योतिपाल
ज्ञानकुमार
ज्ञानदेव
ज्ञानचन्द्र
ज्ञानप्रभ
ज्ञानभद्र
ज्ञानसेन
ज्ञानेन्द्र
ज्ञानश्री
तारानाथ
तिष्य
दानपाल

दानश्रीभद्र
दिग्नाग
दिवाकर
दीपंकर
दीपंकर श्रीज्ञान
देवदत्त
देवानन्द
देवपाल
देवप्रिय
देवराज
देवेन्द्र
देवेन्द्ररक्षित
धरणीन्द्र
धर्मज्ञान
धर्मरत्न
धर्मपाल
धर्मप्रकाश
धर्मगुप्त
धर्मक्षेम
धर्मकीर्ति
धर्मयश
धर्मराज
धर्मरुचि
धर्मशेखर
धर्माकर
धर्मानन्द

धर्माराम
धर्मालोक
धर्मोत्तर
धर्मोदय
ध्यानभद्र
ध्यानमित्र
ध्यानरत्न
नन्द
नन्दसेन
नन्दिय
नन्दीश्वर
नरेन्द्रकुमार
नरेन्द्रयश
नागदत्त
नागदास
नागसेन
नागानन्द
नागार्जुन
नारद
पद्मगुप्त
पद्मकुमार
पद्मसंभव
परमार्थ
पद्माकर
पराक्रमबाहु
पुरुषोत्तमदेव

पुण्यदेव
पूर्ण
पूर्णकुमार
प्रकाशधर्म
प्रज्ञाकर
प्रज्ञाकरगुप्त
प्रज्ञारुचि
पद्मसेन
प्रद्योतकुमार
प्रद्युम्न
प्रभाकर
प्रभाकरमित्र
प्रवरसेन
प्रसन्नकुमार
प्रसेनजित
प्रियदर्शी
बन्धुमान
बलभद्र
बलमित्र
कालदेव
बालादित्य
बुद्धगुप्त
बुद्धघोष
बुद्धपाल
बुद्धरत्न
बुद्धभद्र
बुद्धमित्र
बुद्धयश
बुद्धादित्य
बोधानन्द
बोधिज्ञान
बोधिधर्म
बोधिप्रभ
बोधिमित्र
बोधिरुचि
बोधिश्री
बोधिसेन
भद्रेश्वर
भीमसेन
भूरिदत्त
महानाम
महापन्थ
महासेन
महाली
महीपाल
मल्लिककुमार
महेन्द्र
मिलिन्द
मैत्रेय
मैत्रेयनाथ
यशकुमार
यशोगुप्त
यशोधर
यशोमित्र
रक्षित
रत्नभानु
रत्नरक्षित
रत्नसेन
रत्नसार
राष्ट्रपाल
राजशेखर
राजेन्द्र
राज्यवर्धन
राजेन्द्रकुमार
राहुल
रेवत
रोहण
राजकुमार
लोकक्षेम
लोकानन्द
लोकेश्वर
वसुबन्धु
वसुमित्र
विजय
वात्स्यायन
विजयकुमार
विजयकीर्ति
विजयधर्म
विजयबाहु
विजयवाहन
विजयविक्रम
विजयसंभव
विजयेश्वर
विनीतदेव
विनीतरुचि
विभूतिचंद्र
विमलकीति
विमलबुद्धि
विमलमित्र
विमलाक्ष
विमोक्षसेन
विशाख
वीरसेन
वीरबाहु
वीरराज
शरणंकर
शाक्यश्रीभद्र
शान्तरक्षित
शान्तिदेव
शान्तिप्रभ
शिक्षानन्द
शीलधर्म
शीलभद्र
शीलमंजु

शीलसागर	संघदेव	सिंहवीर	सुमंगल
शीलसेन	संघपाल	सुजात	सुमतिकीर्ति
शीलादित्य	संघभद्र	सुदर्शन	सुमन
शीलेन्द्र	संघमूर्ति	सुधनकुमार	सुमेध
शीलेन्द्ररक्षित	संजीवकुमार	सुदत्त	सुरेन्द्र
शीवर्ली	सत्येन्द्र	सुनीतिकुमार	सुरेन्द्रकुमार
शीवलीकुमार	सत्येन्द्रकुमार	सुनसोम	सूर्यदेव
शुभाकर	संघयश	सुशील	सूर्यसोम
शैलेन्द्र	संघश्री	सुशीलकुमार	स्मृतिज्ञान
शोभित	संघानन्द	सांकृत्य	हर्ष
श्रीदेव	सदानन्द	सनत्कुमार	हर्षकुमार
श्रीमित्र	सर्वज्ञदेव	सुभद्र	हर्षवर्धन
श्रीवर्धन	सर्वदानन्द	सोणकुमार	हेमकुमार
श्रीविजय	सिंहदत्त	सिद्धार्थ	
श्रीहर्ष	सिंहदेव	सुप्रबुद्ध	

बालिका-नाम

अर्चना	अम्बपाली	कल्याणी	गौतमी
अनुला	अम्बिका	किरण	गुणप्रिया
अनुला देवी	अशोका	किरणकुमारी	चन्द्रकिरण
अनुप्रिया	आयुपाली	कुमारदेवी	चारुदेवी
अनोजा	इन्द्रलक्ष्मी	कनककुमारी	चारुमती
अनोजा देवी	उत्तरा	कंचनलता	चित्ररेखा
अनिता	उत्पला	कुसुमलता	चित्रा
अमिता	उत्पलवर्णा	कुसुमकुमारी	चन्द्रा
अञ्जलि	उषा	क्षेमा	चन्द्रावती
अनोमा	उषाकुमारी	गोदावरी	चन्द्रशीला

([illegible])

चम्पा	प्रतिभा	माया	श्रीदेवी
जया	प्रतिभाकुमारी	यशोधरा	संघमित्रा
जयश्री	प्रभावती	यशोमती	सविता
जयकिशोरी	प्रमोदनी	रेखा	सुजाता
जयवर्धनी	पेशलकुमारी	राज्यश्री	सरिता
जयनन्दिनी	पेशला	रोहिणी	सुधर्मावती
जयकुमारी	पद्मा	रत्नमाला	सुप्रिया
ज्योति	पद्मावती	रत्ना	सुमना
जयन्ती	पद्माबला	रत्नमती	सुधा
तारा	प्रमिता	रत्नावली	सुमनादेवी
तिष्यरक्षिता	पाली	विमला	सोमा
धर्मनन्दनी	प्रियदर्शिनी	वजिरा देवी	स्नेहप्रभा
धर्मदिन्ना	बन्धुमती	वज्राकुमारी	सुभद्रा
नन्दा	भद्रा	विजया	सुमेधा
निर्मला	भद्राकुमारी	विशाखा	सुषमा
पुष्पलता	भद्रावती	श्यामा	सुन्दरी
पुष्पा	मजु	श्यामावती	सुधर्मा
प्रेमकुमारी	मंजुला	श्यामाकुमारी	सुजा
प्रेमलता	मलया	शीलवती	स्वर्णपाली
प्रभा	मल्लिका	शीला	सुशीला
पटाचारा	मल्लिका देवी	शीलाकुमारी	हेममाला
पूर्णा	ममता	शशिप्रभा	हेमप्रभा
प्रजावती	मालती	शुभा	हेमलता
प्रज्ञा	मनोरमा	शैला	हेममाली